Research Paper E-ISSN NO : 2455-295X | VOLUME : 9 | ISSUE : 3 | MARCH 2023

समकालीन हिन्दी ग़ज़ल में आर्थिक सरोकार

डॉ. भुवनेश कुमार परिहार [1]

[1] **सहायक आचार्य (हिन्दी), राजकीय महाविद्यालय, सांभर लेक, जयपुर (राजस्थान).**

ABSTRACT:

समकालीन हिन्दी ग़ज़लकारों ने समाज एवं राष्ट्र को आर्थिक दृष्टिकोण से देखकर उसको अर्थपतन से बचाने का प्रयास अपनी ग़ज़लों में किया है। इन्होंने देश की आर्थिक समस्याओं को उजागर किया और आमजन की आर्थिक दयनीय हालत का मार्मिक चित्रण किया। स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् देश की आर्थिक स्थिति जर्जर भी क्योंकि इसे अंग्रेजों ने जमकर लूटा। इन अंग्रेजों ने भारतीय धन और सम्पति को इंग्लैण्ड ले गए एवं बदले में दरिद्रता, बेकारी दे गए। इस परिस्थिति में देश में भूख, बेकारी, निर्धनता, गरीबी का साम्राज्य बढ़ा और मानवीय मूल्यों का ह्रास हो गया। देश के आर्थिक विकास की योजनाएँ भ्रष्टाचार का शिकार हो गई जिसके कारण देश को इन योजनाओं का समुचित लाभ नहीं मिला। इन ग़ज़लकारों ने आर्थिक विसंगतियों को अभिव्यक्त करते हुए समाज में आर्थिक समानता स्थापित करने का पुरजोर प्रयास अपनी ग़ज़लों में किया है।

KEYWORDS:

भूख, गरीबी, शोषण, दरिद्रता, बेकारी, मजदूरी, महंगाई, आर्थिक विषमता, आर्थिक तंगहाली, आर्थिक योजनाएं, बाजारवाद, पूंजीवाद, भ्रष्टाचार, रिश्वतखोरी, मानवतावाद।

प्रस्तावना :

वर्तमान युग में हिन्दी ग़ज़लकारों ने भूख, गरीबी, मजदूरी, बेकारी, महंगाई, आर्थिक विषमता, शोषण, आर्थिक योजनाएं, बाजारवाद, पूंजीवाद, भ्रष्टाचार, रिश्वतखोरी आदि ज्वलंत समस्याओं का वास्तविक चित्रण अपनी ग़ज़लों में किया है। देश में भूख एवं गरीबी के कारण लोग मर रहे हैं। आर्थिक विषमता के कारण गरीब अधिक गरीब और धनाढ्य अधिक अमीर होता जा रहा है। देश की आम जनता को आर्थिक योजनाओं का लाभ नहीं मिल रहा। ऐसी योजनाओं की झूठी रिपोर्ट तैयार की जाती है और अधिकतर पैसा भ्रष्ट अफसर और नेता खा जाते है। देश की आर्थिक विसंगतियों, विद्रूपताओं के लिए भ्रष्ट एवं स्वार्थी राजनीतिज्ञों की नीतियां एवं स्वार्थी प्रवृत्ति भी जिम्मेदार है। वर्तमान में जनता का हित करने, गरीबी के खात्में का वादा करने वाले नेता भी स्वयं का ही आर्थिक हित करते हैं।

सम्पूर्ण विश्व में आर्थिक विषमता पूंजीवाद की देन है जिसके विरूद्ध चेतना जाग्रत करने के लिए समकालीन हिन्दी ग़ज़लकारों ने अपनी ग़ज़लों में पूंजीपतियों पर निशाना साधा है। आर्थिक विषमता के कारण समाज में तीन वर्ग हो गए – उच्च, मध्यम और निम्न वर्ग। इनमें सबसे दयनीय स्थिति निम्न वर्ग की है। देश में गरीबी और अमीरी के बीच की खाई समाप्त होने के बजाय और चौड़ी होती जा रही है। सम्पन्न एवं धनी लोग, श्रमिक व मजदूरों का शोषण कर रहे है। हिन्दी ग़ज़लकारों ने आर्थिक विषमता से होने वाली विसंगतियों का यथार्थ चित्रण अपनी गज़लों में किया है। देश में एक बच्चा पैदा होते ही धनवान तो दूसरी और कई बच्चे कर्ज लिए पैदा होते है। इसी आर्थिक विषमता की खाई को पाटने का प्रयास हिन्दी ग़ज़लों में है। आज देश में आर्थिक विषमता के विरूद्ध वैचारिक चेतना की महत्ती आवश्यकता है।

ग़ज़लकार दुष्यन्त कुमार ने सोचा था कि देश को आजादी मिलने के पश्चात् आर्थिक वैषम्य कम होगा, समाज में शोषण एवं अत्याचार कम होगा, लेकिन ऐसा नहीं हुआ। आम आदमी की दशा में भी सुधार नहीं हुआ। देश में भूख, गरीबी, बेकारी, महंगाई, शोषण एवं भ्रष्टाचार अब भी यथावत है। डॉ. मधु खर्राटे के अनुसार, ''दुष्यन्त जी की तकलीफ अपनी निजी नहीं अपितु आम आदमी की तकलीफ है। देश की महंगाई, गरीबी, भूखमरी, बेकारी, भ्रष्टाचार लापरवाही आदि से उद्भूत आम आदमी की फटे हाल जिन्दगी की तकलीफ है।''[1] इस प्रकार दुष्यन्त कुमार को आर्थिक विषमता गहरे तक कुरेदती है और उनका मोहभंग हो जाता है –

''कहाँ तो तय था चिरागाँ हरेक घर के लिए
कहाँ चिराग़ मयस्सर नहीं शहर के लिए'' [2]

इनके अनुसार, देश में आर्थिक विषमता ऐसी है कि समाज में एक वर्ग रोटी के लिए भूख से पीड़ित है तो दूसरा सम्पन्न वर्ग रोटियां फेंक रहा है। यह विषमता पूंजीवाद के कारण है और पूंजीवादी मानसिकता के शिकार सम्पन्न लोग गरीबों का शोषण करते है, उन्हें लूटते हैं। यह सम्पन्न वर्ग बड़ी मछली के समान है जिसके लिए छोटी मछलियों का बलिदान होता है। इस सच्चाई को दुष्यन्त कुमार अपनी ग़ज़लों में यथार्थता से अभिव्यक्त करते है –

''तुमने इस तालाब में रोहू पकड़ने के लिए,
छोटी–छोटी मछलियाँ चारा बनाकर फेंक दी।
तुम ही खा लेते सुबह को भूख लगती है बहुत,
तुमने बासी रोटियाँ नाहक उठाकर फेंक दी।''[3]

ग़ज़लकार राजेश रेडड़ी कहते है कि आर्थिक विषमता के कारण अमीर एवं गरीब के बीच गहरी खाई है। निर्धन एवं गरीब व्यक्ति अपनी भूख मिटाने के लिए रोटी हेतु संघर्ष कर रहा है लेकिन लालची एवं स्वार्थी अमीर लोगों की प्यास का अंत नहीं है, उन्हें तो विलास के सम्पूर्ण खजाने चाहिए। आर्थिक वैषम्य को प्रकट करती हुई इनकी ग़ज़ल प्रस्तुत है –

''कुछ परिंदों को तो बस दो चार दाने चाहिए,
कुछ को लेकिन आसमानों के खजाने चाहिए''[4]

समाज में निम्न वर्ग भूख, गरीबी, बेकारी, मजदूरी, शिक्षा आदि के लिए संघर्ष कर रहा है जबकि अमीर वर्ग भौतिक साधनों के विलास में डुबा हुआ है। आम आदमी भौतिक साधनों के अभाव में झोंपडी में जीवन जीने को मजबूर है जबकि पूंजीपतियों के पास बहुत सारे मकान है। ग़ज़लकार जहीर कुरैशी ने अपने निम्न शेर में इसी विषमता को प्रकट किया है –

''सेठ साहब ने झोंपड़ी का कद
अपने ऊंचे मकान से देखा''[5]

ग़ज़लकार हनुमंत नायडू ने गरीब की स्थिति स्वतंत्रता पश्चात् भी बदतर होने का मार्मिक चित्रण अपनी ग़ज़लों में व्यक्त किया है। इनके अनुसार उनको खाने को अनाज नहीं मिल रहा, वह भूखे सोने को मजबूर है। उसे जीवन जीने के लिए आवश्यक सुविधाएँ प्राप्त नहीं हो रही है, वे भूख एवं प्यास से लड़ रहे है। इन्होंने अपनी ग़ज़लों में गरीबी से जूझ रहे आम आदमी की स्थिति का यथार्थ चित्रण किया। इनकी यह ग़ज़ल कितनी मार्मिक है –

''खाने को भूख मिल रही, पीने का प्यास है
इस मुल्क में तो यहीं एक इंतजाम है।
पहले गरीब ख्वाब था आता कभी–कभी
अब तो गरीब अपना तकिया कलाम है।''[6]

देश की आर्थिक तंगहाली एवं वर्ग विशेष के ही मालामाल होने की पीड़ा को ग़ज़लकार अदम गोंडवी ने अपनी ग़ज़लों में प्रभावी ढंग से प्रस्तुत किया है। वे कहते है कि आम आदमी गरीबी एवं अर्थाभाव के कारण यातनामय जीवन जी रहा है और उच्च वर्ग मालामाल होकर आनन्दमय जीवन भोग रहा है। इन्होंने अपनी ग़ज़लों में समाज की दोहरी आर्थिक नीति को उजागर किया। वे एक सवाल करते हैं कि आम आदमी इस देश में कब तक कंगाल एवं गरीब बना रहेगा –

"हम रहेंगे कंगाल देश में कब तक
आप होंगे और मालामाल कब तक
जिन्दगी होगी अभी पामाल कब तक
देश का यूँ ही रहेगा हाल कब तक"[7]

इन्होंने देश की आर्थिक विषमता को प्रकट करते हुए व्यक्ति की आमदनी में जमीन–आसमान के अन्तर को अपनी ग़ज़लों में अभिव्यक्त किया। इनके अनुसार, देश में किसी व्यक्ति की आमदनी का औसत चवन्नी है तो किसी की लाखों रूपए हैं। मजदूर दिन रात परिश्रम करके सेठों के बंगले चमकाते हैं, उसके हाथ में छाले एवं पैरों में बिवाई हो जाती है लेकिन सेठ उसको नाममात्र का मानदेय देते है। स्पष्ट कहा जाये तो पूंजीपति उसका शोषण करते है। एक दिन की औसत आमदनी के हिसाब से देश में व्याप्त आर्थिक विषमता को प्रकट करती हुए अदम जी की यह ग़ज़ल देखिए –

"वो जिसके हाथ में छाले हैं पैरों में बिवाई है
उसी के दम से रौनक आपने बंगलों में आई है।
इधर इक दिन की आमदनी का औसत है चवन्नी का
उधर लाखों में सेठों के तिजोरी की कमाई है।"[8]

ग़ज़लकार राजेश रेडड़ी ने आर्थिक विषमता की बढ़ती खाई पर गहरी चिंता प्रकट करते हुए गरीबी एवं अर्थाभाव के कारण आम आदमी के जीवन में आने वाली समस्याओं से हमें ग़ज़ल के माध्यम से अवगत कराया। देश का आम आदमी जीवन के अभावों को समाप्त करने के चक्कर में एक दिन स्वयं ही समाप्त हो जाता है। अर्थाभाव के कारण गरीब, मजदूर, किसान आदि लोग अपने परिवार को सुख–सुविधाएं उपलब्ध नहीं करवा पाते है। वे मेले में खिलौने की दुकान के बजाय या उससे बचते हुए अपने बच्चों को इधर–उधर घुमाते है ताकि कहीं वह बच्चा खिलौने की जिद ना कर ले –

"कुछ उम्र जुटाने में तो कुछ जोड़ने गुजरी
बढ़ते ही संसार में घटता ही गया मैं ।
मेले में थी जिस सिक्त खिलौनें की दुकानें
अस सिक्त से बच्चों को बचाता ही गया मैं।"[9]

ग़ज़लकार ज्ञान प्रकाश विवेक ने अपनी ग़ज़लों में गरीब एवं अभावग्रस्त आम आदमी की समस्याओं, पीड़ाओं, तकलीफों का यथार्थ चित्रण किया। वह आम आदमी आज भी जीवन की प्राथमिक आवश्यकताओं रोटी, कपड़ा, एवं मकान से वंचित है। इन्होंने ऐसे व्यक्ति का चित्रण किया जो अर्थाभाव के कारण नए कपड़े, जूते खरीद नहीं सकता और फटे कपड़ें व पुराने जूते पहनकर वह बारात में जाना नहीं चाहता –

"मैं इसलिए नहीं बारात में हुआ शामिल
फटी कमीज है, जूते भी कुछ पुराने है"[10]

वर्तमान युग में आम आदमी गरीबी के कारण अपने बच्चों को अच्छी शिक्षा एवं संस्कार नहीं दे पा रहा है। गरीब मजदूर, श्रमिक, किसान अर्थाभाव के कारण अपने बच्चों को स्कूल भेज नहीं पा रहे है। प्रसिद्ध शायर मुनव्वर राना ने अपनी ग़ज़ल में ऐसे ही दुखी गरीब पिता का चित्रण किया है जो अपने बच्चे का अच्छी स्कूल में दाखिला नहीं करवा सका –

"बच्चों की फ़ीस, उनकी किताबें, क़लम, दवात
मेरी गरीब आँखों में स्कूल चुभ गया"[11]

इन्होंने अपनी ग़ज़लों में आर्थिक विषमता को अभिव्यक्त करते हुए गरीब अमीर की आमदनी के अंतर का संवेदनात्मक चित्रण किया। साथ ही इनके जीवन स्तर के अंतर की त्रासदी को भी इन्होंने व्यक्त किया। जहाँ अमीर वर्ग के बच्चे सोने की महंगी बालियाँ पहनते है वहीं गरीब के बच्चे कान में तिनका डालकर जीवन जी रहे है। इनकी यह ग़ज़ल कितनी समीचीन एवं सार्थक है–

"शर्म आती है मजदूरी बताते हुए हमको
इतने में तो बच्चों को गुबारा नहीं मिलता
भटकती है हवस दिन–रात सोने की दुकानों में
ग़रीबी कान छिदवाती है, तिनका डाल देती है।"[12]

हिन्दी ग़ज़लकारों ने आर्थिक विषमता से उत्पन्न गरीबी, निर्धनता एवं उसके दुष्परिणामों के विषय में चिंतन के नये आयाम स्थापित किए। इस आर्थिक विषमता के कारण निर्धन लोग भौतिक सुखों के लालच में गलत मार्ग पर चल पड़े है। उसके लिए मानवी जीवन मूल्यों का कोई मोल नहीं रहा। ग़ज़लकार ओंकार गुलशन की यह ग़ज़ल इसी मूल्यहीनता को प्रकट करती है–

"कितने ज़िस्मों पे नहीं आज भी कपड़ा कोई
इस समस्या पे तो आयोग न बैठा कोई
चोर बनता नहीं बच्चा तो भला क्या बनता
जब खिलौना नहीं बाज़ार में सस्ता कोई"[13]

इस प्रकार समकालीन हिन्दी ग़ज़लकारों ने अपने ग़ज़लों में आर्थिक विषमता को अभिव्यक्ति करते हुए गरीब वर्ग की समस्याओं एवं अमीर वर्ग के विलासी जीवन का तुलनात्मक चित्र प्रस्तुत किया। इन्होंने गरीबो की रोटी की समस्या, सुविधाओं का अभाव, बेकारी, दरिद्रता, बेबसी, लाचारी के चित्रण के साथ ही अमीरों, पूंजीपतियों के भौतिक सुखों, ऐश्वर्यमय जीवन, असंवेदनशीलता को ग़ज़लों में यथार्थता से व्यक्त किया। इस आर्थिक विषमता की गहरी खाई को पाटने तथा समाज में आर्थिक समानता लाने का प्रयास हिन्दी ग़ज़लें कर रही है।

समसामयिक हिन्दी ग़ज़ल में मानवीय जीवन मूल्यों के ह्रास पर गहरी चिंता व्यक्त है। अर्थ को ही भगवान मानने वाले युग में मानवीय मूल्यों का कोई अर्थ नहीं रह गया है। बाजारवादी संस्कृति में मनुष्य से ज्यादा महत्व धन–दौलत का हो गया है। मनुष्य मानवीय मूल्यों को भूलाकर दौलत को ही धर्म मानने लगा है। हिन्दी ग़ज़लकारों ने मनुष्य के जीवन का वास्तविक अर्थ समझाते हुए बाजारवाद के स्थान पर मानवतावाद की स्थापना का सार्थक प्रयास किया है।

वर्तमान युग में मनुष्य से अधिक पैसों का महत्व दिया जा रहा है। बाजारवाद के कारण जहां आम आदमी प्राथमिक सुविधाओं के लिए स्वयं को बेच रहा है वहाँ दूसरी और पूंजीपतियों के महल बनते जा रहे हैं। आम आदमी की स्थिति इतनी दयनीय है कि उसकी झोपड़ी भी बिकने के कगार पर है। देश में भीषण आर्थिक विषमता के कारण इनके जीवन मूल्य बदल गए है। अमीर वर्ग के महलों के सामने गरीब की झोपड़ीं को झुकना पड़ता है। वर्तमान समाज के इस दोहरे रूप को व्यक्त करता हुआ कुंअर बैचेन का यह शेर देखिए–

"जहाँ इंसान की औकात से दौलत बड़ी होगी
महल तनकर खड़े होंगे, झुकी हर झोपड़ी होगी"[14]

इन्होंने प्रेम जैसे शाश्वत मानवीय मूल्य पर बाजारवाद के प्रभाव को अपनी ग़ज़लों में मार्मिक ढंग से व्यक्त किया है। आज का मनुष्य सामने वाले की हैसियत देखकर बातचीत करता है। उसका प्यार बाजार में बिकने वाली वस्तु के समान हो गया है। इनके अनुसार, मानव प्रेम पूजाघर के समान था लेकिन वर्तमान भौतिकवादी संस्कृति में वह बाजार बन गया है –

"प्यार पूजाघर था पहले अब तो बस बाज़ार है
जिसको देखो वो ही बिकने के लिए तैयार है"[15]

आज के युग में मनुष्य की कीमत उसके धन–दौलत से होती है, मानवीय मूल्यों से नहीं। अब जीवन मूल्यों की महत्ता कम होती जा रही है। आजकल महंगाई के दौर में आम इंसान की कोई कीमत नहीं रही, गरीबी एवं अर्थाभाव ने उसके जीवन को नरक बना दिया है। इस संवेदनशील समाज में लोगों ने स्वार्थ को ही धर्म बना लिया है, वे आम आदमी की परवाह नहीं करते। ग़ज़लकार माधव कौशिक ने वर्तमान समाज की उस विडम्बनात्मक स्थिति का चित्रण किया है जिसमें बाजार में इंसान को छोड़कर हरेक चीज का भाव आसमान पर है –

"इंसान की कीमत बहुत कम थी, नहीं तो
आकाश से ऊँचा था हर इक भाव शहर में"[16]

इन्होंने बाजारवाद के प्रभाव के कारण आम आदमी की मूल्यहीनता, विवशता, लाचारी का मार्मिक चित्रण किया –

"चौराहे पे बिके मुफ्त में, गलियों में जो रहन रहे
कम से कम आंकी जाती है यारों, कीमत लोगों की"[17]

इस मूल्यहीनता की विसंगति को समकालीन ग़ज़लकारों ने पैसा एवं बाजार के सन्दर्भ में व्यक्त किया है। गरीब व्यक्ति क्या खरीदे, बाजार महंगा है और जेब में पैसा भी नहीं है। साधन सम्पन्न पूंजीपति गरीबी को बनाये रखने की साजिश रचते है। ग़ज़लकार इसहाक असर ने गरीबी एवं अर्थाभाव की वजह से मूल्यों को छोड़ देने वाली आम आदमी की पीड़ा को अपनी ग़ज़लों में व्यक्त किया है। इनका शेर देखिए –

"आदमी सस्ता हुआ, हर चीज महंगी हो गई
कौन से मूल्यों पे पहुँचा इस सदी का आचरण"[18]

समकालीन ग़ज़लकारों ने समाज में आर्थिक विसंगतियों के कारण मानवता समाप्त होने का चित्रण प्रभावी ढंग से किया है। वह पैसों की पीछे भाग रहा है और जीवन मूल्य पीछे छुटते जा रहे है। वह जीवन के वास्तविक सुखों से पिछड़ रहा है। इस मानवता एवं इंसानियत का हत्यारा स्वयं मानव ही है वह ऐसा करके वह चैन से सो रहा है। ग़ज़लकार संजय ग्रोवर ने इसी विसंगतिपूर्ण स्थिति का चित्रण करते हुए मनुष्य की दिन रात पैसा कमाने की प्रवृत्ति पर व्यंग्य किया है। आज के युग के मानव धन के लिए मानव को ही बेच रहा है। उसे जीवन–मूल्यों से कोई लेना देना नहीं, बस पैसा कमाना है। इसी सन्दर्भ में द्रष्टव्य है –

"आपसी को बेचकर दौ कोड़ियाँ ले आएँगे
इस सदी के लोग बस पैदा कमाने पर तुले है"[19]

समकालीन हिन्दी ग़ज़ल में धन दौलत की चकाचौंध में मानवीय मूल्यों की उपेक्षा करने वाले मनुष्य का व्यंग्यात्मक चित्रण है। इस अर्थ की दीवानी दुनिया ने मानवीय मूल्यों का त्याग करके स्वार्थ को अपनाया है। वह पूंजीवाद के प्रभाव में है। आज का मानव सामने वाले की जेब देखकर व्यवहार रखता है। उसे सिक्कों की खनक पसंद है जिसके लिए जमीर या आत्मा ही क्यों ना बेचनी पड़े। ग़ज़लकार राजेश रेडड्री के यह शेर कितना सार्थक है –

"किस दिन मेरे जमीर की बोली नहीं लगी
सिक्को पे डोलना मेरा ईमान कब न था"[20]

"जब तलक जेब में चार पैसे रहे
बस तभी तक ये दुनिया हमारी रही"[21]

इस प्रकार समकालीन हिन्दी ग़ज़लकारों ने आधुनिक अर्थ प्रधान युग में जीवन मूल्यों के निरन्तर ह्यास की स्थिति पर ग़ज़ल रचना की है। बाजारवाद के प्रभाव के कारण भौतिक सुखों के पीछे भागने वाला मनुष्य मानवतावाद एवं इंसानियत जैसे मानवीय मूल्यों को भूला चुका है। इन ग़ज़लकारों की ग़ज़लों में बदलते जीवन मूल्य एवं उनके पतन की सहज अभिव्यक्ति के साथ इन मूल्यों को जीवन में स्वीकार करने की चेतना भी है। समकालीन हिन्दी ग़ज़ल में समाज में व्याप्त आर्थिक शोषण, भ्रष्टाचार, बाजारवाद, पूंजीवाद का यथार्थ चित्रण है। वर्तमान आर्थिक परिवेश में अर्थाभाव एवं अभाव से ग्रस्त मानव के नारकीय जीवन की इन ग़ज़लों में मार्मिक अभिव्यक्ति है। समाज में व्याप्त आर्थिक विषमता का युगीन चित्रण तथा इस विषमता के निराकरण के प्रयास भी इन हिन्दी ग़ज़लों में सच्चाई से अभिव्यक्त है। समाज में बाजारवाद के स्थान पर मानवतावाद की स्थापना का सशक्त प्रयास इन ग़ज़लों में है।

REFERENCES

1. डॉ. मधु खर्राटे : हिन्दी ग़ज़ल के प्रमुख हस्ताक्षर, विद्या प्रकाशन, गुजैनी, कानपुर, उत्तरप्रदेश, प्र.सं.–2012, पृष्ठ संख्या–100
2. दुष्यन्त कुमार : साये में धूप, राधाकृष्ण प्रकाशन, दरियागंज, नई दिल्ली, पृष्ठ संख्या–13
3. वहीं : पृष्ठ संख्या–54
4. राजेश रेडड्री : अनहद, डायमण्ड पॉकेट बुक्स, ओखला इंडस्ट्रियल एरिया, नई दिल्ली, पृष्ठ संख्या–40
5. डॉ. मधु खर्राटे : जहीर कुरैशी की चुनिंदा ग़ज़लें, विद्या प्रकाशन, गुजैनी कानपुर, उत्तरप्रदेश, पृष्ठ संख्या–76
6. हनुमंत नायडु : जलता हुआ सफर, प्रकल्प प्रकाशन, मेरठ, उत्तरप्रदेश, पृष्ठ संख्या–33
7. अदम गोंडवी : धरती की सतह पर, किताबघर प्रकाशन, दरियागंज, नई दिल्ली, पृष्ठ संख्या–69
8. अदम गोंडवी : समय से मुठभेड़, वाणी प्रकाशन, दरियागंज, नई दिल्ली, पृष्ठ संख्या–64
9. राजेश रेडड्री : अनहद, डायमण्ड पॉकेट बुक्स, ओखला इंण्डस्ट्रीयल एरिया, नई दिल्ली, पृष्ठ संख्या–18
10. ज्ञानप्रकाश विवेक : गुफ्तगु अवाम् से है, वाणी प्रकाशन, दरियागंज, नई दिल्ली, पृष्ठ संख्या–16
11. मुनव्वर राना : माँ, वाणी प्रकाशन, दरियागंज, नई दिल्ली, पृष्ठ संख्या–50
12. वहीं : पृष्ठ संख्या–55
13. रोहिताश्व अस्थाना : हिन्दी ग़ज़ल : उद्भव और विकास, सुनील साहित्य सदन, दरियागंज, नई दिल्ली, पृष्ठ संख्या–178
14. कुंअर बैचेन : आंधियों धीरे चलो, वाणी प्रकाशन, दरियागंज, नई दिल्ली, पृष्ठ संख्या–92
15. वहीं : पृष्ठ संख्या–56
16. माधव कौशिक : सूरज के उगने तक, मनीषा प्रकाशन, अशोक विहार, दिल्ली–110052, पृष्ठ संख्या–73
17. वहीं : पृष्ठ संख्या–29
18. डॉ. दरवेश भारती : ग़ज़ल के बहाने (पत्रिका), पुष्प–02, अंक–जनवरी, 2009, अंशु प्रकाशन, दिल्ली, पृष्ठ संख्या–20
19. संजय ग्रोवर : खुदाओं के शहर में आदमी, संवाद प्रकाशन, दिल्ली, पृष्ठ संख्या–32
20. राजेश रेडड्री : उड़ान, वाणी प्रकाशन, दरियागंज, नई दिल्ली, पृष्ठ संख्या–92
21. वहीं : पृष्ठ संख्या–39